भक्त हृदय के उदगार

हे राम मुझे चरण में लो, मेरी 'मैं' को आन मिटा ही दो।
'मैं' मिटना अब चाहती है, इसे अपने में मिला ही दो ।।

अब 'मैं' मिटे और राम रहे, इतनी 'मैं' की चाहना है।
राम नाम में रंगी रहे, इतनी ही बस चाहना है ।।

प्रेम रस यह 'मैं' पिये, फिर यह 'मैं' ही खो जाये।
नाम की मय हो राम मेरे, 'मैं' नाम की मय में खो जाये ।।

मय ही बाक़ी रह जाये, वह मदिरा हो राम की।
लीलाधर तू लीला कर, अब लाज राखो तू नाम की ।।

- परम पूज्य माँ

श्रीमद्भगवद्गीता, द्वितीय अध्ययन - 2/11 (4.5.1960)

अनुक्रमणिका

1. **भक्त हृदय के उद्गार..**
   हे राम मुझे चरण में लो..

3. **दिव्य दर्शन**
   पूज्य छोटे माँ

7. **सच्ची पूजा**
   श्रीमती सत्या महता

10. **ज्ञान अग्न दग्ध कर्माणम्**
   परम पूज्य माँ से पिताजी के प्रश्नोत्तर

17. **"इन्द्रियाँ जिसकी सब प्रकार से वश में हों.."**
   श्रीमद्भगवद्गीता- 'भगवद् बाँसुरी में जीवन धुन', अध्याय - 2/67-68

21. **कौन किसे फिर जान सके, अपना आप जब न रहे!**
   मुण्डकोपनिषद्, द्वितीय मुण्डक 2/2

25. **मा विद्विषावहै**
   डॉ. जे के महता

28. **भगवान के भक्तों के दिव्य गुण**
   श्रीमती शान्ता देवी

32. **जो जाने है उसे भूल जा**
   (परम पूज्य माँ द्वारा प्राप्त सत्संग)

36. **अर्पणा समाचार पत्र**

सम्पादक की ओर से

गद्य में प्रस्तुत सभी लेख साधकों के प्रश्नों के उत्तर में परम पूज्य माँ द्वारा प्राप्त सत्संगों पर आधारित हैं और संकलन-कर्ता की निजी समझ के अनुकूल हैं। काव्य की पंक्तियाँ पूज्य माँ के मुखारविन्द से प्रवाहित दिव्य प्रवाह का अंश हैं; जिसे सुश्री छोटे माँ ने लेखनी बद्ध किया है। अपनी पूर्ण सामर्थ्य के अनुसार उसे ज्यों का त्यों प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। प्रस्तुति में किसी भूल के लिये हम क्षमा प्रार्थी हैं।

सम्पादक : *पूनम मलिक*

सह सम्पादक : *श्रीमती साधना पाल*

पता : अर्पणा आश्रम, मधुबन, करनाल,
132 037, हरियाणा भारत

श्री हरीश्वर दयाल, अर्पणा ट्रस्ट, मधुबन, करनाल 132 037 01, हरियाणा द्वारा जून 2023 को प्रकाशित तथा सोना प्रिन्टर प्राईवेट लिमिटेड, एफ -86/1, ओखला इण्डस्ट्रियल एरिया फेज़-1, नई दिल्ली 110 020 द्वारा मुद्रित

दिव्य दर्शन

पूज्य छोटे माँ

(पूर्व संकलन)

परम पूज्य माँ के साथ गत 36 वर्ष के घनिष्ठ सम्पर्क का मुझे जो प्रसाद मिला है, आज उसी यज्ञशेष का रसास्वादन सभी साधक वृन्द में बाँटना चाहती हूँ। आज अपने भावों को एकत्रित करके, भगवान के साक्षित्व में उपहार स्वरूप उनके ही चरणों में अर्पित करने आई हूँ।

परम पूज्य माँ के चरणों में आकर मुझे यह पता चला कि स्वरूप मौन होता है और रूप में तदरूपता होती है। उस तदरूपता के दर्शन पूज्य माँ के जीवन में अहर्निश प्रत्यक्ष रूप से होते हैं। उन्हीं के अभंग स्वतः स्फुरित प्रवाह से तोल तोल कर पता चला कि उनका जीवन शास्त्रों की साक्षात प्रतिमा है। आज सत दर्शन करते हुए पूज्य माँ के मुखारविन्द से प्रवाहित एक प्रार्थना याद आई :

'हे अप्रमेय अचिन्त्य रूप, करुणापूर्ण मैं तुझे कहूँ।
हे ज्ञान स्वरूप हे दयानिधि, वन्दना तेरी आज करूँ ।।1।।

मोह अज्ञान से घिरा हुआ, तुझको पहचान ही न पाया।
निज अभिमान से भरा हुआ, सत्त्व जान ही न पाया ।।2।।

हे ज्ञान स्वरूप तू ज्ञानघन, अध्यात्म स्वरूप तू सामने था।
मैं ज्ञान दम्भ अभिमान पूर्ण, महा सत्त्व तत्व नहीं देख सका ।।3।।

मुझे अपने गुणों पे नाज़ रहा, अखिल गुणी भी न देखा।
मेरा प्रहार तूने नित्य सहा, हे गुणातीत तू मौन रहा ।।4।।

परम दिव्य गुण तेरे सब, चाकर समान ही सारे थे।
सबके काज तू करता रहा, पर तुम तो ठाकुर हमारे थे ।।5।।'

यह प्रार्थना मेरे जीवन पर पूर्णतया लागू होती है। हम जीवों का यही मल युक्त स्वभाव है.. जब जब भगवान साधुओं की पुकार के परिणामस्वरूप धरती पर अवतरित होते हैं, तो उनका साधारण जीवन देख कर हम भरमा जाते हैं और निहित में छिपी सत्यता के दर्शन प्राप्त करने में असफल रह जाते हैं।

पूज्य माँ के तथाकथित साधना काल के आरम्भ में भगवान जी ने कुछ ऐसा सम्बन्ध जोड़ा कि मुझे उनके पास रहने का सुअवसर मिल गया। मैं उनके पास पूजा करने तो आई नहीं थी परन्तु दृष्ट रूप में यही समझ रही थी कि मैं पूजा करती हूँ। पूज्य माँ तो भली-भाँति मेरे स्वभाव से परिचित्त थे। मैं प्रतिदिन ही कोई बहाना बना कर रूठ जाती.. माँ उसी प्यार से मुझे मना लेते।

देखने में पूज्य माँ का जीवन इतना साधारण रहा कि मैं सदा उनको अपने ही समान मान कर अपनी अभिन्न सखी के रूप में देखती थी। वह मेरे स्तर पर आकर मुझे रिझाते, मुझे मनाते, हर स्तर पर मेरा संरक्षण करते.. मैं अपने मोहवश कभी उनसे रुष्ट हो जाती, कभी आक्रोश भी करती। मेरे ही स्तर पर आकर वह मेरे हर संशय का निवारण करते और मुझे मेरी दुविधा से उबार लेते।

ऐसा प्रतीत होता है कि भगवान जी को ही मेरी मूढ़ता पर करुणा आ गई.. शनैः शनैः मेरे मन में यही विचार उठने लगा कि कौन हैं यह जो इस प्रकार साधारण रूप में, हम जैसे बन कर, हमें इतना प्यार देते हैं! उनका प्यार तो तैल-धारावत निरन्तर बहता जाता है। वह निष्काम प्रेम जो दूसरे के गुण-अवगुण भी नहीं देखता, केवल शुद्ध प्यार ही करता है, ऐसा प्रेम कहाँ से बहता है ?

पूज्य माँ के झुकाव को देख कर तो मन नतमस्तक हुआ जाता है। बहुत बार ऐसी परिस्थितियाँ आईं जहाँ पर मैंने मोह के कारण कह दिया, 'मैं ही ठीक हूँ'.. तो पूज्य माँ को झुकते हुए एक पल भी न लगा। वर्षों तक इसी असीम झुकाव के दर्शन करते हुए आज मेरा मन भी द्रवीभूत हो कर पुकार उठा है, 'हे भगवान! मैं भी ऐसी बनना चाहती हूँ।' जब उनके सामने मैंने हृदय की बात कही, तो हँस कर वह कहने लगे -'यदि तुम्हें मैं पसन्द हूँ तो तुम भी वही करो, जो प्रेम आज तक तुम्हें मिला है.. उसे दूसरों को देना आरम्भ करो, स्वतः ही घूँघट खुल जायेंगे।'

मुझे पूज्य माँ के साधना काल में उनके घनिष्ठ सम्पर्क में रहने का जो सौभाग्य मिला, उसमें मैंने उनके हर प्रकार के व्यवहार के दर्शन किये। मैंने अपने पूर्ण जीवन में पूज्य माँ को कभी विचलित होते नहीं देखा।

विषम से विषम परिस्थितियों का भी सामना किया, परन्तु कभी भी अधीर हो कर उनको आवृत होते नहीं देखा.. सच ही वह दुःखघन हैं और आन्तर में सुखघन हैं। मैंने कभी उन्हें किसी भी परिस्थिति में दुःखी होते नहीं देखा, कभी किसी पर दोषारोपण करते नहीं देखा। मेरे विपरीत व्यवहार पर भी पूज्य माँ ने कभी यह नहीं कहा कि 'तू मेरी साधना में बाधा है' इसके विपरीत प्रेम से वह सदा यही कहते 'तुम्हीं तो मेरी पूजा हो।'

उनके जीवन को देख कर आज पता चलता है कि वह जग में रहते हुए भी उसमें नहीं रहते। तन के नाते परिस्थितियों में उन्हें हर प्रकार का व्यवहार तो मिलता है परन्तु यह व्यवहार उनके आन्तर को स्पर्श नहीं करता। अपने आन्तर के साथ तो मानो उनका कोई भी सम्बन्ध ही नहीं है। कभी-कभी यह देख कर मन में प्रश्न उठता है.. 'मौन स्वरूप का क्या यही रूप है?' पूज्य माँ के दीर्घ सम्पर्क में रहते हुए अब कुछ-कुछ समझ आने लगी और अपने दर्शन होने लगे। धीरे-धीरे प्रत्यक्ष दीखने लगा कि हम जब दुःखी होते हैं तो भगवान की शरण में जाते हैं, परन्तु सुखी होने पर उनको भूल जाते हैं।

हमने तो भगवान को चाकर रूप में बुलाया था। जब काम समाप्त हो गया तो आन्तर में अपने द्वार बन्द कर लेते हैं। सोचा जाये कहाँ गई हमारी श्रद्धा, जिसके बल पर हम सब कुछ करने को तैयार थे? हर प्रकार से हम उनको आसन से उतारने में एक पल भी नहीं लगाते। स्वयं गुमान के आसन पर बैठ गये हैं। भगवान के प्रति ही अब मन में संशय उठने लगे.. सुख के याचक अपने सुख में मस्त हो गये। उनका संग विषयों के साथ हो गया और वृत्तियों का विस्तार हो गया, उन्हें तो मानो सुख रोग हो गया।

भगवान के प्रेम और जीव के स्वभाव को मैंने इसी प्रकार पूज्य माँ में देखा.. उन्होंने सबसे प्रेम तो किया, सब की सेवा भी करी, परन्तु किसी को अपने से बांधा नहीं ! उन्होंने सब को स्वतंत्रता दी !

उस स्वतंत्रता में निहित रहस्य को समझे बिना हम पुनः मोह के जाल में फंस गये । कई प्रकार के छिपे हुए भाव उस प्रकाश के सम्मुख चेत स्तर पर आने लगे और अपना मुखड़ा देख कर हम घबरा गये। हमारी निहित वृत्तियाँ बाहर आ गई। पूज्य माँ ने सच ही कहा है :

'प्रेय पथिक सब पाये करी,
राम को ठुकराते हैं।

श्रेय पथिक यह देख कर,
राम के हो जाते हैं ॥'

पूज्य माँ की छत्रछाया में, उनके प्रेम के सरोवर में हम सब प्यार से रहते हैं, परन्तु देखना यह है कि क्या यह गुण हमारा अपना बन गया? यह तो पूज्य माँ के दिव्य प्रेम का ही प्रताप है कि विभिन्न स्तरों से आये विभिन्न स्वभाव युक्त सब लोग उनकी छत्रछाया में एक ही परिवार बन कर रह रहे हैं। उनका सुख-दुःख, खाना पहरना सब साँझा है। किसी एक व्यक्ति पर तनिक सी आँच आते ही सारा परिवार एकजुट हो कर सहायतार्थ उसके साथ खड़ा हो जाता है।

यही दिव्य विलक्षण दर्शन है। यही इस स्थान के अलौकिक दर्शन हैं। जन्म-जन्मान्तर के पुण्यों के प्रसाद रूप इस दर्शन का सौभाग्य प्राप्त होता है। इसी कारण यह आश्रम दिव्य है। इसकी दिव्यता सच ही अनिर्वचनीय और अवर्णनीय है।❖

सच्ची पूजा

श्रीमती सत्या महता

बरसों से पूज्य माँ के साथ मन्दिर में रहते हुये, सुबह शाम मन्दिर में पूजा करते हुये भी हम 'पूजा' शब्द के अर्थ से अनभिज्ञ थे। पूज्य माँ ने इस विषय पर बहुत अच्छी तरह समझाया है।

वह कहते हैं कि पूजा केवल नाम जपन को नहीं कहते। चाहे सारा दिन हम भगवान जी के मन्दिर में क्यों न बैठे रहें, चाहे जिसे लोग अजपा जाप कहते हैं वह ही क्यों न चल रहा हो, वह सच्ची पूजा नहीं। शास्त्रों में जिसे पूजा कहा है, उसका अर्थ तो हमें पूज्य माँ कुछ कुछ समझा रहे हैं। वह कहते हैं कि जब हम किसी भी अवतारी पुरुष का नाम लेते हैं, राम जी का या भगवान कृष्ण जी का, गुरु नानक देव जी का, ईसू मसीह का, अथवा मोहम्मद का नाम लेते हैं, वह नाम अर्थ सहित होना चाहिये।

जब हम अपने इष्ट का नाम लेते हैं, हमें याद रखना चाहिये कि जो कुछ भी उन्होंने कहा, उन्होंने अपने जीवन में उतारा, वह स्वयं उसकी प्रतिमा हैं। उन्होंने जीवन में वही किया, जो शब्दों राही कहा। इस लिये नाम जपन तब सार्थक हो सकता है, जब हम जीवन में उसे धारण करें यानि जीवन में वैसे ही वर्तें, जैसा शास्त्र कहते हैं।

शास्त्र कहते हैं कि भगवान हर जगह, हर जीव में यानि हर व्यक्ति में बसते हैं। सो, जीवन में जब हम वर्तते हैं तब किसी भी व्यक्ति के सामने आने पर हम याद रखें कि भगवान ही हमारे सामने आये हैं। बिना कहे, इस सत्य को हम स्वीकार करें। उस व्यक्ति ने मुझे मान दिया या मेरा अपमान किया, या यह मेरा अपना है या पराया है, इस कारण किसी से भी हमारा राग-द्वेष होना उचित नहीं। यदि हम सबको राम रूप ही देखते हैं तो हमारा सीस झुक जाना ही बनता है।

यदि किसी व्यक्ति ने अपने या मेरे ही किसी कारणवश मुझे भला बुरा कहा है, तो साधक का विचार यह चाहिये कि भगवान ही इस रूप में स्वयं मुझे द्वेष से रहित होने का अभ्यास कराने आये हैं।

इस प्रकार हर परिस्थिति में एक ओर तो संग रहित व राग-द्वेष से परे होने का अभ्यास होता जायेगा, दूसरी ओर हर एक में भगवान जी का ही वास है, जीवन में अनुभव राही ऐसा देखने का अभ्यास हो जायेगा।

दीर्घकाल तक ऐसा अभ्यास करने के बाद ही राम नाम का जाप स्वतः होने लगेगा और जीवन के अभ्यास राही यही हमारी सच्ची पूजा का रूप धारण करता जायेगा। यह अभ्यास निरन्तर

होते होते एक दिन अजपा जाप होने लगेगा। बिन कहे, बिन सोचे ही यह भाव बन जायेगा कि 'सब भगवान ही हैं।'

इस प्रकार के अभ्यास से ही हम, जो स्वार्थी, दीन, हीन पुरुष हैं, वे इन्सान बनने लगेंगे और दूसरों के प्रति राम भाव रखने से इन्सानियत के गुण- दया, करुणा, क्षमा आदि आन्तर में स्वतः ही आने लगेंगे।

स्वार्थ, कठोरता, लालच, क्रोध इत्यादि के गुणों से भरपूर अभी तो हम पशुओं के समान हैं। अपने सुख के लिये सब कुछ करने को तैयार हैं, चाहे दूसरे को जितना भी कष्ट हो। विचारधारा बदलने पर हम सोचेंगे कि जो मेरे सामने आया है, मैं उसे किस प्रकार से सुखी कर सकता हूँ? फिर अपने से पहले दूसरे के सुख का उपाय करेंगे।

'किसी ने मुझे दुःख दिया है, मेरा कुछ छीन लिया है, मुझे भला बुरा कहा है', इसकी ओर ध्यान न देते हुए साधक दूसरे को करुणा व क्षमा की दृष्टि से देखेगा ओर सोचेगा, 'यह कितना दुःखी होगा जो इसने ऐसा व्यवहार किया', अथवा 'इसके गुण ही ऐसे हैं, जिनसे विवश हुआ यह ऐसे कर रहा है', अथवा 'मेरे ही गुण ऐसे हैं जिन्होंने इसे ऐसा व्यहार करने पर मजबूर कर दिया?'

इस प्रकार के सतत अभ्यास से वह अपने निजी गुणों से प्रभावित न होता हुआ, राग-द्वेष इत्यादि से ऊपर उठ जायेगा। तभी जैसे शास्त्रों में कहा है, उसका सही चिन्तन हो सकेगा। पूजा के योग्य वह तब ही होगा, जब शास्त्रों के अर्थ ठीक समझ आयेंगे।

अच्छे इन्सान बनने के बाद ही ऐसे भावों की पूजा ईश्वर स्वीकार करते हैं। तभी राम नाम सच्चा बनेगा और तभी हमारी पूजा सच्ची बनेगी।

❖ ❖ ❖

ज्ञान अग्न दग्ध कर्माणम्

पिता जी

शास्त्र में कहा है 'ज्ञानाग्निदग्धकर्माणम्' (गीता 4/19), अर्थात् ज्ञान अग्नि कर्मों को नाश कर देती है। कर्मों के जलने की विधि स्पष्ट से कहिये ताकि हम भी अपने कर्म जला सकें।

सारांश

यदि साधक सत् प्रकाशित ज्ञान को जीवन में मान ले तो वह तनत्व भाव तथा जीवत्व भाव से उठकर परम में लय हो जाता है। विवेक अग्न द्वारा संग और कर्तृत्व भाव का नितांत अभाव हो जाता है। जब तन ही भगवान का हो जाये तो 'मैं' का कोई कर्म न रहा, मानो उसके कर्म सब भस्मीभूत हो जाते हैं।

प्रश्न अर्पण

गीता में भगवान कहें, ज्ञान सों कर्म सब जलें।
स्पष्ट करी तुम समझाओ, यह राज़ हम समझ सकें ।।1।।

यह अग्न क्योंकर जले, कैसे कर्म यह जलाये है।
विधि कहो भगवान मेरे, हम भी जलाना चाहे हैं ।।2।।

तत्व ज्ञान

यथार्थता का बोध है ज्ञान, वास्तविकता जो जान ले।
मूल तत्व जीवन सारांश, बोध को ज्ञान जान ले ।।3।।

आत्म तत्व का बोध ज्ञान, निरपेक्ष सत्ता जो जान ले।
अविच्छिन्न रूप नित्य तत्व, अखण्ड सत्त्व को जान ले ।।4।।

साधक ज्ञान की बात कहें, वह तो परम को जान ले।
नित्य तात्विक आकृति, ब्रह्म स्वरूप को जान ले ।।5।।

परम पुरुष पुरुषोत्तम को, उस गुणातीत को जान ले।
सर्वव्यापी सर्व शक्तिमान, सर्वाधार को जान ले ।।6।।

सर्वात्म वह अखिलपति, उस अखिल रूप को जान ले।
त्रिगुणात्मिका शक्ति वा, उत्पत्ति स्थिति लय जान ले ।।7।।

कर्ता क्रिया और कर्म राज़, सर्वभूत कारण आधार।
रचयिता नियमन् कर्ता जो, विध्वंसक को पहचान आज ।।8।।

वह निराकार आकार बधित, उस परम तत्व को जान ले।
पूर्ण की पूर्णता में कहें, अखण्ड पूर्ण को जान ले ।।9।।

जिस पल इसको जान ले, और इसको वह मान ले।
महा संग इस सत् से हो, सत् संग से अग्न वह जल जाये ।।10।।

कर्तृत्व भाव भोक्तृत्व भाव, अहं भाव वहाँ बल जाये।
'मैं' ममता की बात मिटे, मिथ्यात्व ही जब जल जाये ।।11।।

अखण्ड ध्यान हो ब्रह्म में, विषय आसक्ति नहीं रहे।
तन मन और निज बुद्धि की, भी आसक्ति नहीं रहे ।।12।।

अध्यात्म ब्रह्म स्वरूप है, अध्यात्म में वह स्थित भये।
तत्व ज्ञान कही क्या कहा, बस पूर्ण ब्रह्म ही रह जाये ।।13।।

गुण गुणन् में वर्त रहे, स्वतः यह सब कुछ होता है।
ज्ञान अग्न में अहम् बले, अहम् अभाव ही होता है ।।14।।

कर्तृत्व भाव ही बल गया, कौन कर्म उसने किया।
कर्ता ही जब नहीं रहा, कर्मफल तब को' पायेगा ॥15॥

कोई भक्त कहे ज्ञानी कहे, कोई ऋषि मुनि का ध्यान धरे।
कोई कहे वह यज्ञ करे, पर वह तो कुछ भी नहीं करे ॥16॥

ज्ञान अग्न में मिथ्यात्व, समिधा बन जल जाता है।
संग आसक्ति और अहंकार, उसमें सब बल जाता है ॥17॥

ज्ञान-विज्ञान सहित

जिस पल सत्त्व को जान लिया, जान करी उसे मान लिया।
तन आपुनो नहीं रहा, तो तेरा जन्म ही नहीं रहा ॥18॥

सूक्ष्म बात है समझ मना, ध्यान लगा कर सुनियो तुम।
कुछ पल को ही सही मना, ज्ञान अपना के सुनियो तुम ॥19॥

जब तन ही अपना नहीं रहे, तनो कर्म को' अपनाये।
मन को जड़ जब जान ले, मन 'मेरा' कहाँ रह जाये ॥20॥

बुद्धि यह आधुनिक जो, जो जो इसने निर्णय किये।
जिस पल जान ले जड़ थी यह, जड़ ही थे निर्णय इसके ॥21॥

तो कौन कहेगा मैंने किया, कर्तृत्व भाव कहाँ रह पाये।
जब तन मन बुद्धि अपनी नहीं, कर्म को' अपना रह जाये ॥22॥

या कहे मैं कर्ता हूँ, या मोरा कर्म एको नहीं।
या कहे 'मैं' निर्णय करूँ, या बुद्धि मोरी है नहीं ॥23॥

पुनि समझ इस जग में, गुण गुणन् में वर्त रहे।
सोच समझ के आप ही, गुण अपनाये यह न होये ॥24॥

उचित अनुचित का ध्यान भी, उठ नहीं कभी पाता है।
परिस्थिति अनुकूल ही, बुद्धि मन बनता जाता है ॥25॥

जित रुचि इस मन की हुई, उस ओर यह बह गया।
'मैं' का कर्म वहाँ कौन था, वह तो रोक उसे नहीं सका ॥26॥

इस पल भी गर देख लो, परिवर्तन निज में गर चाहो।
लाख निश्चय किया करो, परिवर्तन ला ही न पाओ ॥27॥

गर अपने बस में कुछ नहीं, स्वभाव बंधा सब हो रहा।
स्वभाव रचा परिस्थिति ने, जड़वत् ही सब हो रहा ॥28॥

वहाँ कौन कर्म फिर तेरा है, कुछ अपना नहीं पायेगा।
विवेक जिस पल हो ही गया, यह समझ आ जायेगा ॥29॥

तन जिये जिये या न भी जिये, 'मैं' संग कर नहीं पायेगा।
मन रहे रहे या न भी रहे, मम भाव उठ नहीं पायेगा ॥30॥

पुनि समझ जब तक यह, तन अपना तुम कहते हो।
तब लौ ही कर्तृत्व भाव, आप ही बन के बैठे हो ॥31॥

जब लौ कहो मन मेरा है, कहो यह करूँ वह नहीं करूँ।
निर्णय कहो यह मेरा है, बुद्धि के तदरूप मैं हूँ ॥32॥

तब लौ ही हैं कर्म तेरे, तब लौ ही हैं निर्णय तेरे।
निर्णय तेरे कर्म तेरे, तब लौ ही हैं फल तेरे ॥33॥

दुःखी सुखी जो मन यह हो, अहं बंधा वह होता है।
परिस्थिति अनुकूल ही, वह हँसता और रोता है ॥34॥

कहो यह मैंने नहीं किया, कहो मैंने है यह किया।
कहो यह मैंने चाहा था, मोरा चाहा नहीं हुआ ॥35॥

कहे यह तन मेरा है, ऐसा मान मुझे मिल जाये।
जो मैं कहूँ वही हुआ करे, रेखा बस में हो जाये ॥36॥

जान लिया तन मेरा नहीं, जान लिया मोरी न माने।
जान लिया जो मिले मिले, रेखा इक मोरी न माने ॥37॥

जान लिया जिसे मन कहूँ, यह मेरा नहीं हो सके।
इस में बल मेरा नहीं, मेरे कहे यह नहीं बहे ॥38॥

रेखा शब्द की बात सुनो, स्पष्ट अर्थ ही उसका है।
इक रेखा है खिंची हुई, हर क़दम तन का उसका है ॥39॥

जब जाना तन स्वतः करे, वहाँ कर्म मेरा क्या हुआ।
मन खिलवाड़ है कर रहा, वहाँ 'मैं' का राज्य ही कहाँ हुआ ॥40॥

बुद्धि ने निर्णय वही लिया, जो रेखा में निर्माणित था।
विवेक राही शास्त्रन् में, भी तो यही प्रमाणित था ।।41।।

इक पल भी गर जीवन में, इस ज्ञान को जीव मान ले।
ज्ञान स्वरूप आप भये, इस ही ज्ञान में अहं जले ।।42।।

'मैं' कहाँ फिर रह सके, जब तन मेरा ही नहीं रहे।
'मैं' कहाँ फिर रह सके, जब मन 'मैं' का नहीं रहे ।।43।।

'मैं' कहाँ फिर टिक पाये, जब बुद्धि उसकी नहीं रहे।
इन त्रै में भरमाया 'मैं', जब जाना 'मैं' ही नहीं रहे ।।44।।

न मन रहे न तन रहे, जन्म किसका कौन कहे।
मेरा जन्म अब कौन कहे, जब 'मैं' कहीं पे नहीं रहे ।।45।।

'मैं' से पल में उठ जाये, गर रेखा राज़ वह जान ले।
'मैं' कहाँ पे टिक पाये, जब अपना आप वह जान ले ।।46।।

जो है आधुनिक देखे है, वहाँ पे 'मैं' की बात नहीं।
'मैं' जाने यह जान वह ले, 'मैं' के कुछ भी हाथ नहीं ।।47।।

तन न माने मन न माने, यह बुद्धि एक भी न माने।
यह कैसी 'मैं' है सोच ज़रा, जो किसी को भी न पहचाने ।।48।।

ज्ञान और जीवन मान्यता, विजातीय हैं जान लो।
गर सजातीय हो जायें, तब क्या हो अनुमान करो ।।49।।

जिस पल जानो तन जड़ है, माटी का इक बुत यह है।
मूर्त पूजक 'मैं' है भई, बुत आश्रित भई 'मैं' यह है ।।50।।

जब जान ले और मान ले, तो कौन तन अपना सके।
सच तो यह है गर समझो, यह जन्म नहीं अपना सके ।।51।।

मेरा जन्म तो हुआ नहीं, 'मैं' का जन्म वहाँ नहीं रहे।
भस्मीभूत तव संग होये, तन मन बुद्धि वैसी रहे ।।52।।

समझ करी यह सोच करी, यहाँ ध्यान लगा के समझ लो।
वैसे न भी गर समझो, अनुमान लगा के समझ लो ।।53।।

जिसका तन ही नहीं रहा, जिसका जन्म ही नहीं हुआ।
उसका नाता कौन है फिर, नाता स्वतः ही निभ गया ॥54॥

गुण गुणन् में वर्त रहे, तन का गुण जिसे भा गया।
वह ही उस तन को मिलने, देख सामने आ गया ॥55॥

वह देख रहा वह जान रहा, वहाँ उसका कर्म कोई नहीं।
गर सबने उसको छोड़ दिया, तो उसमें गुण कोई नहीं ॥56॥

वह नाहिं कहे तुम दूर रहो, नाहिं कहे तुम आ जाओ।
वह नाहिं कहे तुम मेरे हो, नाहिं कहे मुझको चाहो ॥57॥

वह देख रहा है दूर से, द्रष्टा मात्र चाहे कह लो।
वहाँ द्रष्टा भी है नहीं, समझन् को द्रष्टा तुम कह लो ॥58॥

द्रष्टा पल भर क्या रूठे, जब देखे खेल है हो रहा।
कोई हँस रहा उसे देख करी, और कोई दूर है हो रहा ॥59॥

पर उसका तन ही है नहीं, केवल रेखा ही बहती है।
परिस्थिति अनुकूल ही जाने, लब स्वतः सब कहती है ॥60॥

गुण गुणन् में वर्ते हैं, यह रेखा का खिलवाड़ है।
जो मिल गया उस तन को, रेखा रचित परिवार है ॥61॥

पर जाने कुछ पल को मिला, जो मिला बिछुड़ वह जायेगा।
तन किसी का कब बना, यह निश्चित मिट जायेगा ॥62॥

जो जाने जान करी माने, वह दोष नहीं लगायेगा।
पर सच तो यह आपुनो ही, तन वह नहीं अपनायेगा ॥63॥

प्रतिकार झंकार वा मन में, उठ नहीं तब पाती है।
उसकी बुद्धि जान मना, निर्णय कर नहीं पाती है ॥64॥

गर 'मैं' है कर्म भी है, जब 'मैं' नहीं तो कर्म नहीं।
कर्ता है तो कर्म है, अकर्ता का कोई कर्म नहीं ॥65॥

सोच सोच तू समझ मना, सोच से समझ तू पायेगा।
जब 'मैं' कहीं पे नहीं रहे, कर्म कहाँ रह जायेगा ॥66॥

गर 'मैं' कहीं नहीं रही, कर्मफल फिर कहाँ रहे।
जन्म ही 'मैं' का नहीं रहा, स्वतः कर्म वा बल गये ॥67॥

'मैं' संग से मुक्त भई, और 'मैं' सों तन मुक्त भया।
जब तन 'मैं' सों रहित हुआ, उस पल ब्रह्म का वह भया ॥68॥

'मैं' का जन्म ही नहीं हुआ, तो कौन कर्म फिर 'मैं' का है।
तन जब राम का हो गया, कौन धर्म फिर 'मैं' का है ॥69॥

वा पे 'मैं' का बल नहीं, वहाँ राम का बल रह जाता है।
संरक्षण उसका तो ही कहूँ, राम ही करने आता है ॥70॥

योगक्षेम भी उस तन का, फिर रेखा राही राम करे।
'मैं' ने सब कुछ छोड़ दिया, मिथ्यात्व रमण वह नहीं करे ॥71॥

विवेक अग्न में चिता जली, भस्मीभूत वहाँ संग हुई।
बाक़ी तन जो रह गया, ब्रह्म की थी वह ब्रह्म भई ॥72॥

पूर्ण में वह पूर्ण है, पूर्ण का उसे चिह्न कह लो।
अमृत पुत्र ब्रह्म का, प्रतीक उसको तुम कह लो ॥73॥

वहाँ जो हो सो राम करे, वह चक्र तो है चल रहा।
रेखा निर्माणित चक्र वह, देख स्वतः है चल रहा ॥74॥

ऐसी स्थिति तुम कस जानो, कुछ समझ नहीं आयेगा।
आप वही तुम हो जाओ, बिन समझ समझ आ जायेगा ॥75॥

जो राम कहा सो सत्य कहा, जो श्याम कहा वह सत्य ही है।
उपनिषदन् में जो है दिया, जान लो वह सत्य ही है ॥76॥

वह सत्य ज्ञान है जान करी, जीवन में सत्य मान लो।
मान करी वह आप बनो, तो ही कुछ अनुमान हो ॥77॥

उसको जिस पल मानोगे, विवेक अग्न जल जायेगी।
उस ज्ञान अग्न में समझो, तव संग अहं जल जायेगी ॥78॥

ज्ञान अग्न सों भस्म हुए, 'मैं' की जा पर राम रहें।
जो कर्म रहें रहें राम के, 'मैं' के भस्मीभूत होयें ॥79॥

22.1.1967

❖ ❖ ❖

“इन्द्रियाँ जिसकी सब प्रकार से वश में हों,
उसकी बुद्धि स्थिर होती है।”

इन्द्रियाणां हि चरतां यन्मनोऽनु विधीयते।
तदस्य हरति प्रज्ञां वायुर्नावमिवाम्भसि ॥

श्रीमद्भगवद्गीता - 2/67

अब भगवान कहते हैं :

शब्दार्थ :

1. **ज्यों तीव्र वायु जल में पड़ी नैया को हर लेती है,**
2. **त्यों विषयों का उपभोग करती हुई इन्द्रियों में से जिस इन्द्रिय के साथ मन रहता है,**
3. **वह इन्द्रिय उस पुरुष की (निर्णयात्मिका शक्तिरूप) प्रज्ञा को हर लेती है।**

तत्व विस्तार :

यानि जिस इन्द्रिय के साथ मन रहता है, वह एक इन्द्रिय भी बुद्धि को हर लेती है। यह सूक्ष्म बात है, ध्यान से समझ!

मन :

1. चाहे सम्पूर्ण इन्द्रियाँ विषय उपभोग करें,
   क) वह बुद्धि को नहीं हरतीं;
   ख) तब भी बुद्धि गौण नहीं होती;
2. परन्तु :
   क) जिस इन्द्रिय के साथ मन रहता है,

ख) यानि जिस इन्द्रिय के साथ मनो संग हो जाता है,

ग) जिस इन्द्रिय में मन की रुचि हो जाती है, वह इन्द्रिय बुद्धि को हर लेती है।

3. इन्द्रियों की प्रधानता मनोसंग के कारण ही होती है।
4. फिर विषय प्रधानता हो जाती है।
5. तब जीव विषयों के आश्रित और पराधीन हो जाता है।
6. वह इन्द्रिय रोचक विषय पाने के लिये कार्य में संलग्न हो जाता है।
7. तब उसे उचित अनुचित कार्य प्रणाली अथवा दूसरे लोगों का भी ध्यान नहीं रहता।
8. जहान में कितनों को दुःख दिया या तड़पाया, इसका भी ध्यान नहीं रहता।
9. उसके जीवन के मूल्य बदलने लगते हैं।
10. वह व्यक्तिगत और स्वार्थी होने लगता है।
11. मन ने जब इन्द्रियों का आश्रय लिया, तब जीव अन्धा होने लगता है, क्योंकि इन्द्रियाँ विषयों का आश्रय लेने लगती हैं।
12. विषय और इन्द्रियाँ, दोनों ही अन्धे हैं। मनो संग इन्द्रिय राही स्थूल विषय उपभोग में हो जाये, तब :

    क) वह मन बुद्धि को आवृत कर देता है।

    ख) बुद्धि स्वतंत्र नहीं रहती, वह मन से प्रभावित हो जाती है।

    ग) इतना ही नहीं, वह मन की चाकर बन कर मन को रुचिकर पाने की विधि बताने लग जाती है।

अभी के लिये तुम इतना ही समझ लो कि यह बुद्धि, जो जीव को ब्रह्म ने दी, एक परम आलौकिक भागवत् देन है, इसको जैसे आप चाहें इस्तेमाल कर सकते हैं। यह निर्णयात्मिका शक्ति है और भगवान जैसा बनने की विधि भी सुझा सकती है। दूसरी ओर यह तन तथा इन्द्रिय और मन को संग के विषय को पाने की विधि भी बता सकती है।

निरावृत बुद्धि सत की सत्यता और असत की असत्यता दिखा सकती है। इस बुद्धि में न्याय शक्ति निहित होती है। यह दैवी सम्पदा को जीवन में उतार सकती है। पर जीव साधारणतया इसे पूछता ही नहीं व मनोस्तर पर ही रह जाता है। जो मन चाहे, वह उसके ही पीछे भागता है। जो मन को रुचिकर हो, उसे चाहता है और उसे पाने के यत्न करता है। जो मन को अरुचिकर हो उससे दूर भागना चाहता है।

यहाँ कहते हैं, जब मन इन्द्रियों से जाये मिले, तब प्रज्ञा का नाश हो जाता है। पहले प्रज्ञा को समझ लो!

प्रज्ञा :

1. निरावृत बुद्धि से जो बहे, उसे तुम प्रज्ञा कह लो।
2. जब बुद्धि अपने मन की रुचि अरुचि से भी अप्रभावित रहे तब उसका हर निर्णय प्रज्ञावान का निर्णय होता है।
3. जब बुद्धि अपने मान अपमान, हानि लाभ से विचलित न हो तब उसका बहाव प्रज्ञा बहाव होता है। देख मेरी नन्हीं जान! यहाँ

विषय त्याग की बातें नहीं कही, विषयों से मन के संग के त्याग की बात कही है।

4. पूर्ण उपभोग करते हुए भी गर वहाँ मन का संग न हो तो प्रज्ञा नहीं डोलती।

विषय प्रधान नहीं होने चाहियें, प्रधान परम गुण होने चाहियें, वरना बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है और मन प्रधान हो जाता है। मन प्रधान होने से मन का संग जिन विषयों से है, वह प्रधान हो जाते हैं और जीव विषयों पर आश्रित हो जाता है। तत्पश्चात् जीव नित्य उन विषयों को उपलब्ध करने में तत्पर हो जाता है। वह उचित अनुचित में, कर्तव्य अकर्तव्य में, धर्म अधर्म में, सच और झूठ में भेद भूल जाता है तथा व्यक्तिगत और स्वार्थी हो जाता है। फिर प्रज्ञा या सत बुद्धि लुप्त हो जाती है।

यह सब मन के कारण होता है, इसलिये कहते हैं :

क) बुद्धि को हरने वाला मन और मनोसंग ही है।
ख) मन साथ दे तो इन्द्रियाँ बलवान हो जाती हैं और विषय सप्राण हो जाते हैं।
ग) मन ही बुद्धि का दुश्मन है।
घ) मन ही सत का हरण करता है।
ङ) मन ही अज्ञान आवरण बन जाता है।
च) मन ही सत से दूर करवाता है।
छ) मन ही मोह को जन्म देता है।

अज्ञान बन कर बुद्धि से दुश्मनी मन ही करता है; तब सत की नैया डूब जाती है।

तस्माद्यस्य महाबाहो निगृहीतानि सर्वशः।
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ।।

श्रीमद्भगवद्गीता - 2/68

भगवान कहते हैं :

शब्दार्थ :

1. इसलिये हे अर्जुन!
2. जिसकी इन्द्रियाँ
3. इन्द्रियों के विषयों से सब प्रकार से वश में की हुई होती हैं,
4. उसकी बुद्धि स्थिर होती है।

तत्व विस्तार :

नन्हीं! अब भगवान कहते हैं, "जिसकी इन्द्रियाँ सब प्रकार से वश में की हुई होती हैं,

उसकी बुद्धि स्थिर होती है।" यह सब कहने का अभिप्राय इतना ही है कि :

क) इन्द्रियों पर मन का राज्य नहीं होना चाहिये, उन पर बुद्धि का राज्य होना चाहिये।

ख) केवल विषय के उपभोग मात्र से कोई फ़र्क नहीं पड़ता। मन ही इन्द्रियों के साथ रह कर, विषयों से प्रभावित होकर बुद्धि को आवृत करता है।

ग) यदि मन इन्द्रियों का साथ न दे तो विषय विषपूर्ण नहीं रहते।

घ) वह यहाँ पर विषय त्याग की बात नहीं कह रहे, वह तो मन के त्याग की बात कह रहे हैं।

जब मन इन्द्रियों का साथ नहीं देगा, इन्द्रियाँ स्वतः ही वश में हो जायेंगी। तब मनो रुचि या अरुचि के कारण इन्द्रियों की विषय उपभोग में प्रवृत्ति नहीं होगी।

वास्तव में नन्हीं!

1. मन प्रधान हो जाये तो रुचि अरुचि प्रधान हो जाती है।
2. बुद्धि प्रधान हो जाये तो जीव विषयों के प्रति उदासीन हो जाता है।
3. बुद्धि प्रधान हो जाये तो विषयों का कोई ख़ास महत्व नहीं रहता।
4. बुद्धि को जो मिल गया सो ठीक, जो न मिला वह न सही।

स्थिर बुद्धि विषय उपभोग मिलने पर विषयों से आवृत नहीं होती और विषय के न मिलने पर विचलित नहीं होती। अब और भी ध्यान से समझ! अन्न न मिलने से स्थितप्रज्ञ का तन क्षीण ज़रूर हो जायेगा किन्तु उनकी बुद्धि नित्य अप्रभावित रहेगी। तन को पालने के लिये तो वही सब चाहिये जो तन को पुष्टित करे, किन्तु उसकी बुद्धि को बाह्य अन्न नहीं चाहिये। उसकी बुद्धि स्थूल तथा सूक्ष्म विषयों से सर्वथा परे होती है।

यानि जब बुद्धि नित्य अप्रभावित रहे और मन नित्य मौन रहे, तब वह स्थितप्रज्ञ कहलाता है। ❖

कौन किसे फिर जान सके, अपना आप जब न रहे!

गतांक से आगे..

यदर्चिमद्यदणुभ्योऽणु च यस्मिँल्लोका निहिता लोकिनश्च ।
तदेतदक्षरं ब्रह्म स प्राणस्तदु वाङ्मनः । तदेतत्सत्यं तदमृतं तद्वेद्धव्यं सोम्य विद्धि ।।

मुण्डकोपनिषद् - 2/2/2

शब्दार्थः

जो दीप्तिमान है और जो सूक्ष्मों से भी सूक्ष्म है, जिसमें समस्त लोक और उन लोकों में रहने वाले प्राणी स्थित हैं; वही यह अविनाशी ब्रह्म है, वही प्राण है, वही वाणी और मन है। वही यह सत्य है, वह अमृत है। हे प्यारे! उस बेंधने योग्य लक्ष्य को तू बेंध।

तत्व विस्तारः

प्रकाश स्वरूप देदीप्यमान, सम्पूर्ण ही आप करे।
उससों ज्योति पा करके, दृश्यमान यह जग भये ।।1।।

नयनन् ज्योति मनो ज्योति, बुद्धि ज्योतिर्मान करे।
वा सों ज्योति पा करके, प्रज्ञा ज्योतिर्मान भये ।।2।।

सूक्ष्म सों अति सूक्ष्म वह, ब्रह्माण्ड उसी में समाया है।
स्थूल सों है स्थूल वही, ब्रह्माण्ड उसी की छाया है ।।3।।

समस्त लोक उसी में हैं, अधिदेव स्थित उसी में हैं।
अधियज्ञ अधिभूत भी, परिपूर्ण स्थित उसी में हैं ।।4।।

अरे देख कहें यह पूर्ण ही, अविनाशी वह ब्रह्म ही है।
अव्यव नित्य अखण्ड एक, ज्ञानमान वह ब्रह्म ही है ॥5॥

है प्राण वही मन वाणी भी, सत्य स्वरूप रे वह ही है।
परम सत्त्व अमृत रूप, अद्वैत रूप रे वह ही है ॥6॥

अजर अमर अभाव रहित, शिव रूप रे वह ही है।
सर्वज्ञ वह सर्वोपरि, ज्ञान स्वरूप रे वह ही है ॥7॥

आदि कारण पूर्ण का, परिपूर्ण भी वह ही है।
कर्मातीत सर्व कर्ता, गुण परे सर्व गुण वह ही है ॥8॥

हर शब्द रे वह ही है, हर भाव परे रे वह ही है।
निर् इन्द्रिय हर इन्द्री वही, इन्द्रीपति भी वह ही है ॥9॥

अंग रहित सर्वांगी, अपना मन भी वह ही है।
वह निराकार उपमा रहित, सर्वाकार भी वह ही है ॥10॥

सर्व शक्तिमान है वह, प्रकाश बस वह ही है।
सर्व आश्रय पर आश्रित भी, एक सत्त्व बस वह ही है ॥11॥

नाम रूप सों वह है परे, जड़ जंगम सब आप भये।
त्रिकाल पति हो काल बधित, अमूर्त मूर्त आप भये ॥12॥

हे सौम्य सुनो मम प्रिय सुनो, ज्ञातव्य बस वह ही है।
पूर्ण जग में जान लो, प्राप्तव्य बस वह ही है ॥13॥

हर वृत्ति हर भावना का, तीर बना कर बेंध ले।
लक्ष्य तेरा बस वह ही है, उठ और आ कर देख ले ॥14॥

वह परम सत्त्व अखण्ड तत्व, प्रकाश स्वरूप को जान ले।
ज्ञान स्वरूप परम चेतन, आत्म रूप तो जान ले ॥15॥

अविनाशी भूमा है वही, परिशुद्ध को जान ले।
विश्वेश्वरा वह महेश्वरा, वरद वर को जान ले ॥16॥

विश्वपति वह शिव रूप, सर्वात्मना को जान ले।
परम पुरुष पुरुषोत्तम, विश्वात्मना को जान ले ॥17॥

सूक्ष्म अति सूक्ष्म वह, परम स्थूल को जान ले।
त्रिकाल रूप त्रिकाल परे, त्रिकाल मूर्त जान ले ॥18॥

हर मन अमन को जान ले, अचिन्त्य चिन्तन जान ले।
शब्द परे की वाणी है, निष्प्राण को प्राण जान ले ॥19॥

भावन् सों वह है परे, भाव त्यजी रे जान ले।
मनो चिन्तन में न आये, इनसों उठकर जान ले ॥20॥

बुद्धि सों अग्राह्य वह, बुद्धि सों उठ कर जान ले।
आत्म ही उसे जान सके, स्थित हो कर जान ले ॥21॥

मन बुद्धि अरे वृत्तियन् सों, निवृत्त होई करी जान ले।
अनित्य भाव सब त्यज करी, नित्य स्थित होई जान ले ॥22॥

परम सत्त्व रे वह ही है, सत्त्व से राम रे क्या समझूँ।
अखण्ड रस इक सत्त्व है, अद्वैत वही रे क्या समझूँ ॥23॥

आपेक्षक सत्त्व रे जग में है, इससों उठना ही होगा।
सत असत रे इस जग का, अब तो त्यजना ही होगा ॥24॥

एक लक्ष्य बस वह ही है, साधक तेरा जान ले।
एक वृत्ति एकचित्त होई, परम सत्त्व रे जान ले ॥25॥

जो है सब कुछ वह ही है, मन अनुरूप रे हो जाये।
परम सत्त्व रे वह ही है, उसमें मन रे खो जाये ॥26॥

गर रे सत्त्व को पाना है, मनो मौन होना होगा।
मनोवृत्ति अरे चाहना का, पूर्ण मौन होना होगा ॥27॥

वृत्तियाँ झालर देख ज़रा, मूर्ख मन यह पहरे है।
सत्त्व नहीं यह देख रहे, काल केश यह पहरे है ॥28॥

वृत्तियाँ मुण्डन हो जायें, मन कहीं पे न रहे।
परम तो ही तो जान सके, यह अहम् कहीं पे न रहे ॥29॥

अनेक विधि वह बार बार रे, यह ही कहते जाते हैं।
सूक्ष्म सों परे रे है, यह ही तो कहे जाते हैं ॥30॥

जीवत्व भाव सब छोड़ दे, कारण में जो लय होये ।
आत्म कारण ही तो है, कारण ही फिर पा सके ।।31।।

या कह दूँ यह कारण ही, महा लय को पायेगा ।
संस्काराशय है यह, पूर्ण ही मिट जायेगा ।।32।।

संस्कार मिटा संस्काराशय, का मिटाव भी तू पाये ।
विज्ञान रूप मन परे, यह ही राह है समझ ले ।।33।।

मनो मान्यता यह मन है, जीवत्व भाव यह मान्यता है ।
अहंकार यह मम भाव, पूर्ण मनो मान्यता है ।।34।।

स्वरूप श्रद्धा जो भी हो, रेखा अनुकूल ही पाये है ।
कारण तन या कह लो, सूक्ष्म तन ही पाये है ।।35।।

सूक्ष्म सों उठ कर कहें, कारण तन इसको कह लो ।
संग पुन: गर न उठे, कर्म बीज फल नहीं रे हो ।।36।।

बीज वृक्ष गर हो नहीं, तो वह फल नहीं पायेगा ।
पूर्ण बीज वृक्ष फल, वह साधक नहीं खायेगा ।।37।।

मन भोगी मन योगी भया, समाधिस्थ वह हो गया ।
परम तत्व जो जान लिया, वा परे जो हो गया ।।38।।

समाधि से यह तन उठा, मन रहित ही उठ रहा ।
मनो भावना मनो प्रवाह, अहम् रहित रे उठ रहा ।।39।।

या समझो तुम्हें यूँ कहें, रेखा बंधा तन उठ रहा ।
मन उसी में खो गया, भाव रहित मन उठ रहा ।।40।।

या कह लूँ अरे मन बिना, सूक्ष्म उठ ही क्या पाये ।
जिस परम को जान लिया, वह एकरूप ही हो जाये ।।41।।

बार बार वह यही कहें, सत्त्व सार अब जान लो ।
तन मन बुद्धि से परे, परम आधार रे जान लो ।।42।।

आत्म ही रे जान सके, आत्म आत्म में लीन भये ।
कौन किसे फिर जान सके, अपना आप जब न रहे ।।43।।

17-9-61

मा विद्विषावहै

डॉ. जे.के.महता
(पूर्व संकलन)

कठोपनिषद् में शिष्य को ज्ञान का उपदेश देने से पहले गुरु भगवान से प्रार्थना करते हैः

ओम् सह नाववतु । सह नौ भुनक्त ।
सह वीर्यं करवावहै ।
तेजस्वि नावधीतमस्तु । मा विद्विषावहै ।

अर्थात् - हे पूर्णब्रह्म परमात्मन्, आप हम दोनों गुरु-शिष्य की साथ-साथ रक्षा करें। हम दोनों का साथ-साथ पालन करें। हम दोनों साथ-साथ ही शक्ति प्राप्त करें। हम दोनों की पढ़ी हुई विद्या तेजोमयी हो। हम दोनों परस्पर द्वेष न करें।

आत्मवान सतगुरु तो अपने तन, मन, बुद्धि से उठ चुके हैं। पुर्णरुपेण अपने को भूले हुए, अपने प्रति मौन स्वरूप, अपने आप को बचा नहीं पायेंगे। झुकाव की प्रतिमा, गुरु का जग और शिष्य से संरक्षण अनिवार्य है। वह आत्मा की खोज में अपनी शरण में आये हुये शिष्य की अपात्रता को जानते हैं। उसे उसी की राह में आ रहे मनोविकार से बचाना है। उसकी क्लिष्ट वृत्तियों के सब ही प्रहार गुरु पर ही होते हैं।

शिष्य तो अहंकार, गुमान और दम्भ से भरा हुआ, अपने आप को श्रेष्ठ समझता है। गुर के शरणापन्न होते हुये भी वह अपने धन, वैभव, पद, कार्य कुशलता के गुमान के कारण, गुरु पर एहसान

करता है। वह अपने आप को ठीक मानता है, अपने आप को गुरु के बराबर समझता है। जितना जितना गुरु से ज्ञान पाता है, उतनी उतनी उनसे ही होड़ लगाता है। इस होड़ को वह चेत मन में जानता नहीं हैं, परन्तु उनके साथ ठिठाई करता है और कई बार उन का दिया हुआ काम भी बिगाड़ देता है। उनकी आज्ञा का पालन भी नहीं करता, मगर गुरु को छोड़ कर भी कभी नहीं जाता।

आत्मा में स्थित, सदगुरु तो सत्य और सुन्दरता की दिव्य सप्राण प्रतिमा हैं। दैवी गुण ही उनके जीवन का एकमात्र, गंगा की धारावत् अखण्ड प्रवाह है। प्रेम और करुणा की साक्षात् मूर्ति, ज्ञानघन, सदगुरु तो किसी के भी अवगुण पर चित्त नहीं धरते। जो भी उनके सामने आये, उन्हें तो वह उनका अपना आप ही लगता है।

वह उसके तदरूप हो जाते हैं। वहाँ तो अहं और संग का नितान्त अभाव है। अपनी शरण में आये हुये शिष्य के प्रति उनमें द्वेष के भाव का तो प्रश्न ही नहीं उठता। फिर उन्होंने यह कैसे कहा 'हम एक दूसरे से द्वेष न करें।'

गुरु ज्ञान के अभिलाषी शिष्य को ज्ञान का रस सार प्रदान करने की क्षमता रखते हैं, परन्तु शिष्य की गुरु के साथ होड़ रूपा द्वेष को वह जानते हैं। वह यह भी जानते हैं कि यही उसकी राह में सब से बड़ी बाधा है। शिष्य गुरु चरण में अपने प्रेम और सेवा के दावे की आड़ में अपने अन्दर इस द्वेष के भाव को स्वीकार ही नहीं करता।

कोई आत्मवान सदगुरु ही ऐसी प्रार्थना कर सकते हैं। वह शिष्य के स्तर पर जाकर अपने आप को उस जैसा ही ज़ाहिर करते हुये भगवान से कह सकते हैं :

(1) हम दोनों का संरक्षण कीजिये।
(2) हम दोनों पर अपने ज्ञान का प्रकाश डालिये।
(3) उसे जीवन में धारण करने की हम दोनों को शक्ति प्रदान कीजिये।
(4) हम एक दूसरे के साथ द्वेष न करें।

इन में से सदगुरु को तो कुछ भी लागू नहीं होता। ज्ञानघन, प्रकाशस्वरूप वह तो सब में स्थित आत्मा में समाहित हो चुके, सब आप ही हैं। जहाँ दूसरा है ही नहीं, तो वह द्वेष किस से करें? समत्व भाव में जी रहे उन प्रेम स्वरूप के जीवन की छत्रछाया में तो अपने-पराये, शत्रु और मित्र सब ही संरक्षण पाते हैं।

गुरु तो शिष्य को अंगीकार करते है, परन्तु शिष्य अपनी स्थापति के लिये उनके दिव्य प्रेम और क्षमा का संरक्षण पाता हुआ केवल उनका लाभ उठाना चाहता है। वह समझता है कि मैं उनसे

पूरा ज्ञान प्राप्त कर के जग में उनके शिष्य के रूप में जाना जाऊँगा। वह अपने आपको आत्मवान कहलाना चाहता है और इसका गुमान करता है। वह गुरु से आशा रखता है कि गुरु उस की ग़लतियों और कमियों को अपने ऊपर ले कर उसे जग की दोषदृष्टि से बचायेंगे।

ऐसे शिष्य और गुरु का आपस में विवाद तो अनिवार्य है। एक तरफ अहंकार की प्रतिम, जग में स्थापति चाह रहा शिष्य और दूसरी तरफ झुकाव और निरहंकारता की प्रतिमा गुरु! परन्तु शिष्य गुरु के पास स्वरूप की माँग लेकर आया है। सच्चा गुरु हमेशा शिष्य के अहंकार के साथ टक्कर लेगा। शिष्य अपने अहंकार की स्थापति के लिये सदा गुरु पर ही प्रहार करेगा।

सदगुरु यह सब जानते हुये शिष्य के किसी भी अवगुण पर चित्त नहीं धरते। अपने प्रेम और करुणा से उसे थामते हुये वह सदा यही कोशिश करते रहते हैं कि शिष्य अपने अन्दर अपनी साधना की राह में सब से बड़े अहंकार रूप शत्रु को देख ले। अहंकार की प्रतिमा शिष्य, गुरु के झुकाव और क्षमा का जितना जितना अनुभव पाता है, उसमें आसुरी गुण बढ़ते ही जाते हैं और कई बार शिष्य अति भयंकर रूप धर लेता है।

मौन स्वरूप सदगुरु शिष्य को पूरी स्वतन्त्रता प्रदान करते हैं, जिस का शिष्य नाजायज़ फायदा उठाता रहता है। हो सकता है, शिष्य का गुरु पर द्वेष रूप प्रहार का पाप का प्याला भर जाये और एक दिन वह अपना मुखड़ा देख कर, तड़प कर सदगुरु के चरण पड़े। तब ही तो सदगुरु उसे सुपात्र शिष्य की राह पर ले जा सकते हैं।

यह जो ऊपर कहा गया है हक़ीक़त में यह परम पूज्य माँ के साथ मेरी अपनी कहानी है। मुझे पूज्य माँ के साथ निरन्तर रहते हुये 43 बरस हो गए। उनके मौन के प्रसाद स्वरूप आज अपने इस अहंकार का स्पष्ट दर्शन हो रहा है।

आज देख रहा हूँ कि इसके सब प्रहार स्वयं माँ पर हुये। यह मेरा परम सौभाग्य है कि प्रेम स्वरूप, अपने प्रति मौन सदगुरु पूज्य माँ की कृपा से आज साधक की राह में सबसे बड़ी बाधा और अज्ञान-वर्धक अहंकार को मैं देख सका! परम पूज्य माँ ने तो पहले दिन ही कहा था :

'स्थिति की माँग मत करो.. स्वरूप की माँग माँग नहीं।
आवरण मिटाव ही साधना है, जीवन बिन कोई राह नहीं॥'

(परम पूज्य माँ के द्वारा साधक को अंग्रेज़ी में करवाये गये कठोपनिषद् की प्रार्थना पर आधारित!)

❖ ❖ ❖

भगवान के भक्तों के दिव्य गुण

प्रस्तुति-श्रीमती शान्ता देवी

(पूर्व संकलन)

भगवान का भक्त कौन है ? उस राम भक्त के गुण क्या होते हैं ? वह किस दृष्टिकोण से अपनी जीवन क्रिया चलाता है ? शास्त्र के संदेश को आदेश मान कर, उसका मनन व चिन्तन कैसा बनता है? नाम उसके जीवन से कैसे बहता है ? भगवान जी किस भक्त को इसी जीवन में वरने का आश्वासन भी देते हैं ?

ज़रा गीता के सन्दर्भ में हम इसे देखें तो सही!

भगवान का भक्त सब प्राणियों में वैर रहित और संग रहित होता है। राम का भक्त हर कर्म राम काज जान कर ही करता है। वह सत अभिलाषी परम पथ का अनुयायी बन चुका है। वह सत्य निष्ठ व ध्येय निष्ठ होता है। उसका आश्रय भी परम है और उसकी गति भी परम होती है। अतः उसकी अनुरक्ति केवल परम तत्व से ही होती है।

उसके स्वभाव की सुन्दरता यही है कि वह हर एक के साथ व्यवहार में भगवान को नहीं भूलता। वह तो हर पल अपने संग भगवान जी का ही साक्षित्व बनाये रखता है। वह मन रूपी बादलों से नहीं ढकता बल्कि सब में आत्म-दर्शन करता हुआ मन के जाल से बाहर निकल जाता है। उसकी राहों में अनुकूल व प्रतिकूल, सम व विषम, कोई भी परिस्थिति बाधक नहीं बनती। उसने ज्ञान के प्रकाश में तन की क्षणभंगुरता, अनित्यता व अस्थिरता को समझ लिया है इसलिये उसमें तनत्व भाव का नितांत अभाव होता है। सतपथ के इस पथिक को न ही उसकी बुद्धि आवृत करती है और न ही वह परम पथ से विचलित होता है।

भगवान स्वयं प्रेम स्वरूप हैं ; इसलिये वह भागवद् प्रेमी, भगवान के गुणों को, जीवन में धारण करने में ही अपना श्रेय मानता है। स्थूल में दैवी गुणों के बहाव से उसके कर्म स्वतः निष्काम होते जाते हैं। आन्तर में भी अपने मन में उठने वाले सूक्ष्म भावों का निरीक्षण करते हुये वह शास्त्र विधि से जीता है। मन में उठने वाले भावों के सागर में वह उलझता नहीं, बल्कि मन को मौन कराने के लिये वह सदैव राम भाव से युक्त रहता है।

वह सब भूतों में द्वेष भाव से रहित, निःस्वार्थी, सब का प्रेमी, दयालु , ममता से रहित, अहंकार से परे, सुख दुःखों की प्राप्ति में सम और क्षमावान होता है तथा अपने प्रति अपराध करने वालों को भी वह अभय दान देता है। वह नित्य तृप्त, दृढ़ निश्चयात्मक, नित्य योग में स्थित, हर्ष क्रोध भय तथा उद्वेग से मुक्त, अनपेक्ष, पवित्र, दक्ष और व्यथा रहित होता है। वह संकल्प विकल्प और आशा तृष्णा से रहित होता है। वह 'यदृच्छा लाभ संतुष्टो' के भाव में रहता हुआ, राग द्वेष से परे, लाभ-हानि, जय-पराजय, यश-अपयश, मान-अपमान आदि द्वन्द्वों से सर्वथा अतीत हो जाता है।

उसकी दृष्टि में सारा संसार ही अपना बन जाता है यानि वह अपने पराये के भेद से ऊपर उठ जाता है। उसके जीवन में मोह, क्रोध, लोभ व कामनाओं का अभाव होता है। वह किसी से द्वेष करे तो कैसे करे ? क्योंकि वह समस्त जग को 'सिया राममय' मानता है। उसके पास दोष दृष्टि नहीं होती। वह स्वप्न में भी किसी को दोष न देकर हर परिस्थिति व हर व्यक्ति को राम की ही देन मान कर कहता है कि 'हर रूप में राम ही आये हैं, मुझे सिखाने आये हैं।'

सुख की परिस्थिति हो या दुःख की, वह उसे राम देन मान कर उसी का आलिंगन करता है। उसने कभी बाह्य परिस्थिति का परिवर्तन नहीं माँगा। जग द्वारा लगाये गये कलंकों से वह कभी नहीं घबराता क्योंकि वह द्वेषी में भी राम के ही दर्शन करता है। वह तो 'शिव तत्व' के रहस्य व उसकी महिमा को जान चुका है, जो लोगों के लाखों प्रहार सहने के पश्चात भी बाह्य विपरीतता को गले लगाये

हुए 'नीलकण्ठ' हैं और जो ग्रीवा में सर्पों की माला धारण किये हुये भी शान्त, स्थिर, दत्तचित्त, समाधिस्थ रहते हैं।

राम भक्त का ध्यान चौराहे में भी राम चरणों में टिका होता है क्योंकि उसका तन कर्त्तव्य करता है और चित्त राम चरणों में निमग्न रहता है। राम भक्त राम परायण होकर ही उठता, बैठता व जीता है। वह तो हर स्थिति में राम के ही दर्शन करता हुआ राम रस का पान करता है। भक्त तो निरन्तर अपने प्रेमास्पद में आसक्त है, इसलिये वह 'मैं' 'मम' और 'अहं' भाव से ऊपर उठा होता है। उसके आन्तर में सर्वत्र और सदैव अजस्त्र प्रेमधारा ही प्रवाहित होती रहती है।

राम भक्त की प्रीत अपने मनोजग से उठ कर अपने इष्ट भगवान राम के चरणों पर ही केन्द्रित होती है, इसलिये उसे अब बाह्य विषय नहीं भरमाते और वह परमात्म तत्व में लीन सदैव आनन्दित ही रहता है। नाम ही उसके जीवन का परम आधार है। उसका नाम, वाणी व कण्ठ तक ही सीमित नहीं होता बल्कि उसका जीवन नामी के पूर्ण गुणों की सजीव प्रतिमा बन जाता है। नाम की ज्योति की लौ में उसके समस्त मनोकर्म भस्म हो जाते हैं।

वह अनन्य भक्त व्यक्तिगतता में न जी कर समष्टि के लिये जीता है। 'हरि इच्छा' की प्रधानता में उसका हर कर्म निष्काम भाव से बहता है। 'कर्मण्येवधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन' - गीता का यह श्लोक उसके जीवन का मूलमन्त्र बन जाता है।

वह ज्ञानी भक्त जग को ठाकुर मानता है और स्वयं को चाकर, इसलिये वह भगवान के आदेश की प्रतीक्षा में रहता है। 'हुक्म रज़ाई चलना' वह इस उक्ति पर अगाध विश्वास एवं श्रद्धा से चलता है। उसकी भक्ति अनन्य योग युक्त और अव्यभिचारिणी होती है। उसमें अहं मिटाव, अभिमान अभाव, दम्भपूर्ण आचरण एवं हिंसात्मक वृत्ति का नितान्त अभाव होता है।

वह दया, सरलता और सुहृदयता की मूर्त बन अपने सदगुरु की उपासना में लीन रहता है। वह गुरु चरणों में आसीन होकर उनसे तत्व ज्ञान को जानने में ही अपना कल्याण मानता है। उसके समक्ष 'हरि' व 'गुरु' में कोई अन्तर नहीं होता। वह भगवान के मन्दिर में सजदा तो करता है पर उनसे कुछ माँगता नहीं। वह तो अपने इष्ट देव के चरणों में अपना तन, मन, धन यानि अपना सर्वस्व भेंट करने जाता है न कि उनसे कुछ माँगने! उसकी प्रीत बिना शर्त्तों के होती है और वह इस विश्वास पर जीता है कि 'जेहि विधि राखे राम तेहि विधि रहिये'।

वह 'सर्वारम्भ परित्यागी' है, उसकी हर रूप में तदरूपता और उसका अपना स्वरूप मौन होता है। पावनता, स्थिरता और आत्म संयम की मूर्त, वह शास्त्र के हर वाक् को अपने सर माथे पर धरता है।

राम भक्त बाह्य जग को सेवा-सामग्री मान कर अपना कर्त्तव्य निभाता है। उसके मन में गिले शिकवे का कोई स्थान ही नहीं होता। वह 'आत्मौपम्येन' अर्थात् अपनी ही उपमा से जग को निहारता है। वह योगी भक्त केवल सत को अपना कर अपने प्रेमास्पद से मिलने के लिये चल पड़ता है। वह अनिकेत, स्थिरमति होता है और इन्द्रियों के विषयों के प्रति वैराग्य भाव में रहता है। वह शुभ अशुभ, शत्रु मित्र, शीत उष्ण, सुख दुःख, निन्दा स्तुति, मान-अपमान में समभाव से निरासक्त होकर जीता है।

योगारूढ़ पुरुष तन की क्षणभंगुरता, जन्म-मृत्यु, बुढ़ापा, व्याधि आदि को समक्ष रख कर नित्य, अव्यय, अखण्ड, अविनाशी परम की ओर ही ध्यान लगाता है। वह पुत्र, स्त्री, घर, धन आदि के प्रति अनासक्त हुआ, ममता रहित है। वह अव्यभिचारिणी भक्ति में मग्न, केवल एक सर्वशक्तिमान परमेश्वर को ही अपना स्वामी मानते हुए, स्वार्थ और अभिमान का त्याग करके, श्रद्धा और भाव सहित परम प्रेम से निरन्तर भगवान का ही मनन व चिन्तन करता हुआ निदिध्यासन में आसीन होता है।

उसके मौन की साधना मौन में ही होती है। अध्यात्म ही उसके जीवन का रससार होता है क्योंकि उसकी नित्य स्थिति ब्रह्म ज्ञान व तत्व ज्ञान के अर्थ रूप परमात्मा की खोज में ही नियुक्त होती है। वही उसका ज्ञातव्य होता है और वही प्राप्तव्य।

उसका समस्त जीवन आवरण मिटाव की साधना में ही बीतता है। उसका जीवन दैवी गुणों की प्रतिमा बन कर अन्तकाल तक उन गुणों का अभ्यास रूप में प्रमाण देता रहता है। वह कर्तृत्व भाव से परे भोक्ता पक्षी की भाँति खट्टे मीठे फल न खाता हुआ द्रष्टा पक्षी की तरह जीता है। वह साधारण जीवन में जीते हुए विलक्षण दृष्टिकोण को अपनाये होता है। उसके जीवन का मापदंड केवल शास्त्र ही होता है।

वह करुणा मूर्ति दुराचारी को भी नफ़रत की निगाह से नहीं देखता। 'गुणाः गुणेषु वर्तन्ते' यह जानकर, वह व्यवहार करता है। उसके हृदय में करुणा की अरुणा सागर बन कर हिलोरे लेती है।

उसके जीवन में प्रेम की अजस्त्र धारा बह रही होती है इसलिये उसके समक्ष जो कोई भी जिस भाव अनुसार जाता है, वह उससे वही प्राप्त करता है। ऐसे अनन्य भागवद् भक्त के लिये भगवान स्वयं कहते हैं कि उसका कभी भी नाश नहीं होता। जैसे गीता में कहा है कि :

क्षिप्रंभवति धर्मात्माशश्वच्छान्तिं निगच्छति
कौन्तेय प्रति जानीहि न मे भक्तः प्रणश्यति ।। (9/31)

अर्थात् वह शीघ्र ही धर्मात्मा हो जाता है और सदा रहने वाली परम शान्ति को प्राप्त होता है। हे अर्जुन, तू निश्चयपूर्वक सत्य जान कि मेरा भक्त नष्ट नहीं होता।

❖ ❖ ❖

जो जाने है, उसे भूल जा..

प्रश्न : विवेक की जागृति कैसे हो?

परम पूज्य माँ : आज आपकी जो बुद्धि है, वह आपकी रुचि, अरुचि पर आश्रित है, आपकी समझ पर आश्रित है। छान्दोग्योपनिषद् में सनत कुमार ने नारद से कहा था, 'जो सीखा है, उसको भूलकर आओ।' इसके पीछे जो सार है, उसको समझो..

नारद जी महाज्ञानी थे, वह छोटे से बालक सनत कुमार के पास गए। उन्होंने कहा, 'मैं 32 प्रकार की विद्याएँ जानता हूँ। वेद, उपनिषद्, न्याय दर्शन, ज्योतिष, गणित, विज्ञान, गायन, नृत्य, नाट्य इत्यादि सब विद्याएँ जानता हूँ, उस ज्ञान में आरूढ़ हूँ, परन्तु मेरे पास वह शान्ति नहीं, जो आपके पास है।' सनत कुमार ने कहा, 'जो कुछ भी आपको आता है, पहले उसे भूल जाएँ। जो ज्ञातव्य है, उसको तो आपने जाना ही नहीं। जो आप कहते हैं कि आप जानते हैं, वह केवल आपकी समझ है। इसलिये उसे भूलकर आये।'

यदि अनुभव लेना है, तो शब्द का, वाक् का घूँघट उठाकर देखो। इसीलिए गुरु नानक जी ने कहा, 'खोज शब्द में ले।' सनत कुमार ने भी यही कहा कि शब्दों के पीछे कुछ और है, यदि उसको नहीं देखोगे तो समझ नहीं आएगी।

प्रेम और सत्य की परिभाषा क्या है? वह अव्यक्त गुण हैं। उनका कोई रूप नहीं जिसे आप देख सकें। कहते हैं, सत्य अनुभवगम्य है, वाक् में नहीं आता। शब्द उनके द्वार पर ले जा सकते हैं, आप द्वार खटखटा सकते हैं, पर दीदार किसी और का चाहिये। उसको वही समझ सकेगा जिसमें यह गुण आ जाएँ। यह समझ परे की बात है। इसलिए कहते हैं..

गर समझ न समझूँगी, तो समझ समझ को छोड़ दे।
अपनी समझ से संग त्यजी, राम से नाता जोड़ दे॥

यही कहा सनत कुमार ने नारद को! ज़रा कल्पना तो करके देखें! छोटा सा बालक सनत कुमार और इतने बड़े ज्ञानी नारद! वह प्रणाम करके कहने लगे..

जो तुझमें है मुझमें नहीं, तेरा सत्य समझ नहीं पाया हूँ।
शास्त्र पढ़ी पढ़ी सुन, तोरे दर पे आया हूँ॥

आज मुझको अपनाओ, सत्य सार समझाओ।
शब्दन् पाछे सत्य जो, मेरे हृदय में आज बिठलाओ॥

वह अपने आसन से उतर कर कितना नीचे आए होंगे! सनत कुमार कितना पढ़े हुए होंगे, उनकी आयु देख लो। उनको पढ़ने की क्या आवश्यकता थी? वह तो स्वयं वह थे, जबकि नारद दूसरों को बताते थे। यह भेद है दोनों में।

जैसे माँ बच्चे को कहती है कि भगवान को बुलाओ तो वह आ जाते हैं, शिशु उसकी बात मान जाता है, आप भले ही उसको न माने।

'गोपाल भैया' नाटक में बच्चे को जब जंगल में से जाते हुए डर लगता था, तो उसकी माँ ने कहा, 'गोपाल तेरा भाई है, उसी को पुकार लिया करना.. वह तेरी मदद को आ जायेगा।' जब वह भयभीत हुआ तो पुकारने लगा..

भय लागे आ जाओ, भैया मोरे आओ।
गोपाला मेरे गोपाला, आवो आवो आवो॥

कर मोरा थाम तू लो, भयभीत हुआ मैं पुकारे हूँ।
तू एको बन्धु मेरा है, यह जान करी पुकारे हूँ॥

उसे कोई लोक-लाज का भय न था। जो माँ ने उसे कहा, उसने सच मान लिया, तभी तो वह निस्संकोच पुकार सका।

जब तक जो सुना, उसे मान नहीं लेते, तब तक गुज़ारा नहीं होगा। यदि सत्य में मानते हो तो सत्य बोलना शुरू कर दो। फिर सोच विचार क्या कि यह कहें न कहें? फिर यह नहीं सोच सकते कि लोग क्या कहेंगे.. या उपासना सत्य की करो या लोगों की।

असल में हमारे मनोविकार हमें रोक देते हैं.. आरम्भ में सब बातें बनाएंगे, लांछन लगाएंगे। क्या कोई भक्त ऐसा देखा जिसको जीवन में अपमान नहीं मिला ? सबसे घनिष्ठ लोगों ने ही उनको कलंकित किया। जीवन भर अपमानित हो कर भी उनकी ही कथा जन्म जन्म तक चली जाती है, वह हमेशा के लिए अमर हो जाते हैं। सन्त का जीवन तो जन्म जन्म तक जाएगा ही। अन्त में विजय हमेशा सत्य की ही होती है।

सत्य कहते हुए इनसान भयभीत होता है। वह सोचता है, यदि सत्य कहूँगा तो लोग नाराज़ हो जायेंगे, खाना कहाँ से मिलेगा, व्यापार कैसे चलेगा? आज तलक सत्य कहने वाले को कभी भूखा मरते नहीं देखा। गीता पढ़ पढ़ कर कृष्ण की उपासना नहीं होती, सत्य स्वरूप कृष्ण को हृदय में धर कर उनका आवाहन करो, तो काम बनेगा। जब उनको हृदय में धर लिया, जब साक्षी राम बन गए, फिर सत्य की उपस्थिति में झूठ नहीं कह सकते।

एक और भगवान हों, एक ओर जीव! भगवान आपकी परीक्षा लेने आयें, तो क्या आप सत्य कह सकोगे? यदि कृष्ण से प्यार है, तो अपने मान अपमान का प्रश्न ही नहीं उठ सकता। यहाँ उस कृष्ण तत्व की बात कर रहे हैं, जो नन्दबाबा भी आप हैं, उन राम की बात कर रहे हैं, जो दशरथ भी स्वयं हैं। उन्होंने दशरथ पुत्र बन कर सत्य की उपमा दी। यदि उस सत्य से प्रीत हो जाए तो काम बन जाए।

मृत्यु के बाद किसको सुनाते हो, 'राम नाम ही सत्य है!' अरे भाई! वहाँ से सीखें! क्यों नहीं कहते :

मैं जीते जी ही कह दूँगा, राम नाम सत है।
गर जीते जी मैं नित्य कहूँ, राम नाम सत है॥

गर हर पल मुझको याद रहे, एको नाम सत है।
तो सत्य हृदय में लेकर के, जग में जाऊँगा॥

जो भी जैसा भी होए, मैं सत बतलाऊँगा।
सत्य सत्य ही होई रहा, मुझे जग वालों ने कहा॥

जब आप निर्भय हो कर सत्य में प्रतिष्ठित हो गए, अर्थात् मनोविकार का नितान्त अभाव करके पूर्ण सत्य पर टिक गए, जब कोई भी परिस्थिति आपको विचलित न कर पाए, तब ही काम बनेगा। यह करने की बात है, होने की बात है, कहने की नहीं। यह प्रचार की बात नहीं, यह तो गूँगे का गुड़ है। यह अनुभवगम्य है, बुद्धिगम्य नहीं।

शास्त्र स्वयं कह रहे हैं कि वह वहाँ तक पहुँच नहीं सकते, वह केवल आपको अन्दर धकेले सकते हैं। काम तभी बनेगा जब वहाँ लग्न लग जाए, जब प्रेम हो जाए.. जब तक आपकी अपनी अहम् की कृपा नहीं होती, तब तक गुज़ारा नहीं होगा। जब आपने निर्णय कर लिया कि आपने सत्य ही बोलना है, तो आपको कौन रोक सकता है? फिर विवेक अपने आप जाग जायेगा।

(परम पूज्य माँ द्वारा प्राप्त सत्संग - 26.10.1965)

कुछ इस प्रकार के भाव पूज्य माँ ने निम्मलिखित प्रवाह में भी कहे हैं..

शास्त्र पढ़ी पढ़ी जो पाओ, वह ज्ञान नहीं कहलाता है।
ज्ञानी वह ही होये है, जो प्रज्ञावान हो जाता है॥

पढ़ी पढ़ी नारद भी गये, सनत कुमार के चरण पड़े।
पूर्ण विद्या वह जाने थे, फिर भी जाई के शरण पड़े॥

सनत को कहा नारद ने, यह बुद्धि नहीं मैंने जान लिया।
पूर्ण ज्ञान तो पा लिया, चैना अब लौ मुझे नहीं मिला॥

ज्ञान तो था पर शब्द वह था, वाक् मात्र वह ज्ञान था।
अनुभव किसको कहते हैं, उसका नहीं अनुमान था॥

बुद्धि स्थूल की नहीं नहीं, स्थूल राही वह नहीं मिले।
आंतर जाये सत देखे, प्रतिष्ठित हो तब ही देखे॥

राम कहीं के पहुँच वहाँ, ज्ञान राही नहीं पहुँच सको।
शास्त्रन् में जो है कहा, मनन करो तो पहुँच सको॥

(ज्ञान विज्ञान विवेक - शुद्ध बुद्धि 30.10.1965)

❖ ❖ ❖

परम पूज्य माँ

अर्पणा
समाचार पत्र

अर्पणा ट्रस्ट, मधुबन,
करनाल, हरियाणा
जून 2023

आश्रम संस्मरण

व्यावहारिक आध्यात्मिक जीवन का मार्ग, एक ऐसा मार्ग है जिसे परम पूज्य माँ ने स्वयं के लिये 9 मार्च 1958 को चुना.. इसे हम सब 'साधना दिवस' के रूप में मनाते हैं। उन्होंने अपने दिव्य जीवन के उदाहरण से हम सबको इस पथ पर चलने के लिए प्रेरित किया।

इस धन्य दिवस के अवसर पर परम पूज्य माँ के व्यावहारिक ज्ञान के सागर में से कुछ कण 'ज़ूम' द्वारा सभी के साथ सांझा किये गये.. आज के तकनीक प्रधान युग में दूर दूर से भी समान विचारधारा वाले लोग जुड़ पाते हैं। भक्ति संगीत की मंचीय प्रस्तुति 'शबरी' भी दिखाई गई।

आशीर्वाद, पूज्य माँ के नश्वर अवशेषों का अंतिम विश्राम स्थल.. 16 अप्रैल, पूज्य माँ के महा समाधि दिवस को प्रेम और भक्ति से परिपूर्ण अर्पणा परिवार एवं उनके मित्रों के साथ-साथ अर्पणा की कई सेवा गतिविधियों के कर्मचारियों और लाभार्थियों द्वारा यह दिवस मनाया गया। श्री कृष्ण अरोड़ा ने पूज्य माँ की वाणी, 'उर्वशी' से कई चुनिंदा भजनों के दिल को छू लेने वाले सत्र का नेतृत्व किया।

एसएचजी की सैकड़ों ग्रामीण महिलाओं ने परम पूज्य माँ को कृतज्ञतापूर्ण श्रद्धांजलि अर्पित की

डॉ. श्रीमती राज गुप्ता पूज्य माँ की पावन स्मृति में ज्योत जलाते हुये..

अर्पणा अस्पताल

अर्पणा द्वारा मल्टीस्पेशलिटी नि:शुल्क शिविर लगाये गये

साधारणतया ग्रामीण लोग जानकारी, आर्थिक संसाधनों एवं यातायात के अभाव के कारण चिकित्सा विशेषज्ञों की महत्वपूर्ण सेवाएँ प्राप्त करने में असमर्थ रह जाते हैं।

अप्रैल और मई में, दिल्ली और करनाल से 9 चिकित्सा विशेषज्ञों ने अर्पणा अस्पताल में, विशेष रूप से ग्रामीण लोगों के लिये चिकित्सा शिविरों का आयोजन किया।

डॉ. राहुल गुप्ता कोलोनोस्कोपी करते हुए

इन शिविरों में न्यूरोलॉजी, नेफ्रोलॉजी, गैस्ट्रोएंटरोलॉजी, यूरोलॉजी, हेमेटोलॉजी, दंत चिकित्सा, एक्यूप्रेशर और फिजियोथेरेपी इत्यादि विशेषताएँ प्रमुख रहीं। यहाँ मुफ़्त परामर्श और जाँच की सुविधा प्रदान की गई, जिनमें प्रयोगशाला परीक्षण और दवाओं पर विशेष छूट भी शामिल थी। इन शिविरों से 150 से भी अधिक रोगी लाभान्वित हुए।

हरियाणा

जलजनित रोगों की कार्यशाला

मलेरिया विभाग के सीएमओ ने अर्पणा के स्वयं सेवकों एवं दूरदराज़ क्षेत्रों के लिये एक कार्यशाला आयोजित की जिसमें डेंगू, मलेरिया और चिकनगुनिया से बचाव के विषय में बताया गया।

कैलाश ने कभी हार नहीं मानी

श्री किशन की पत्नी कैलाश एवं उनके 3 बच्चे, गाँव कुटेल गामड़ी में रहते हैं। उसका पति बंधुआ मजदूरी करता था। वह स्वयं भी दिहाड़ीदार मजदूर बन गई लेकिन मुश्किल से अपने 3 बच्चों का भरणपोषण कर पाती थी।

वह अर्पणा द्वारा चलाये गये एसएचजी समूह में शामिल हो गई। कुछेक वर्षों में उसने अपनी पर्याप्त बचत भी कर ली, समूह से ऋण भी प्राप्त किया जिससे :

~ वह अपने पति को बंधुआ मजदूरी से मुक्त करवा सकी।

~ अब वह अपना पक्का मकान बना रहे हैं।

~ अपने बेटे के लिये उसने एक वाहन भी खरीद लिया।

दिल्ली के कार्यक्रम

दिल्ली प्रीमियर के रोटरी क्लब द्वारा मान्यता

21 अप्रैल को दिल्ली के प्रीमियर रोटरी क्लब ने गर्व के साथ उत्कृष्ठ सेवाओं के लिये, अर्पणा ट्रस्ट सामुदायिक सेवाओं की अध्यक्ष, श्रीमती सुषमा अग्रवाल को सेवा पुरस्कार से प्रतिष्ठित किया।

यह पुरस्कार इन्दिरा कैंप व गौतमपुरी, मोलरबंद, नई दिल्ली की पुनर्वास कॉलोनियों एवं झुग्गी झोंपड़ियों में रहने वाले बच्चों के सम्पूर्ण विकास हेतु 3 दशकों से भी अधिक अनुकरणीय सामाजिक सेवा के लिये दिया गया।

अर्पणा ट्रस्ट के शिक्षा कार्यक्रम के लिए अर्जेंटीना के राजदूत, एच.ई. ह्यूगो जेवियर गोब्बी, और दिल्ली, प्रीमियर रोटरी क्लब के राष्ट्रपति श्री हरि खेमका जी ने श्रीमती सुषमा अग्रवाल को 3 लाख रुपये के नकद पुरस्कार के साथ एक ट्रॉफी और एक प्रमाण पत्र भी दिया।

'ज्ञान आरंभ ' की गतिविधियाँ

कला प्रतियोगिता द्वारा बच्चों की अद्भुत प्रतिभा का ज्ञात हुआ

- कक्षा 1-11 के लिए शिक्षण सहायता
- होली का त्यौहार 7 मार्च को मनाया गया
- 24 मार्च को 'अभिभावक शिक्षक' बैठक हुई
- 24 अप्रैल 2023 को ईद मनाई गई
- छात्रों को उनकी शैक्षिक उपलब्धियों के लिए छात्रवृत्ति प्रदान की गई
- मार्च में छात्रों की रचनात्मकता को बढ़ावा देने के लिए एक कला प्रतियोगिता आयोजित की गई।
- 12 अप्रैल को कला प्रतियोगिता विजेताओं के लिए पुरस्कार वितरण का समारोह आयोजित किया गया।
- नये सीखने वाले छात्रों के लिए कंप्यूटर प्रोग्राम को फिर से आरम्भ किया गया!

कोविड-19 के कारण एक अंतराल के बाद 3 महीने का बेसिक कंप्यूटर कोर्स अप्रैल में आरम्भ किया गया। छात्र अपने लिये अलग-अलग कंप्यूटर उपलब्ध होने पर उत्साहित हुए.. प्रत्येक प्रतिभागी को पर्याप्त मात्रा में अभ्यास समय उपलब्ध हुआ।

हिमाचल प्रदेश

सीमा देवी

सीमा देवी ने कुज्जल गाँव में अपने स्वयं सहायता समूह से एक गाय ख़रीदने के लिए 35,000 रुपये का ऋण लिया। अब वह दूध बेच कर प्रति माह 10,000 रुपये कमा लेती है। इससे पहले उसने ऋण लेकर मुर्गी पालन शुरू किया जिससे वह अंडे और मुर्गियाँ बेच कर 12,000 रुपये वार्षिक की कमाई कर सकी। सीमा की सफलता को देखकर अन्य महिलाओं को भी आय-सृजन गतिविधियों में प्रेरणा मिल रही है।

रिकॉर्ड कीपिंग में स्वयं सहायता समूह प्रशिक्षण

26 स्वयं सहायता समूहों से 89 महिलाओं ने स्वयं सहायता समूह रिकॉर्ड-कीपिंग के प्रशिक्षण सत्र में भाग लिया, जिसे 5 व 7 अप्रैल को गाँव गजनोई के अर्पणा केंद्र में आयोजित किया गया। महिलाओं ने नियम-कायदों पर चर्चा की एवं ऋण के लिए 1.5% ब्याज दर पर सहमती ली।

स्वयं सहायता समूह की सलफता के लिये महिलाओं ने कागज़ी कार्रवाई व कैलकुलेटर सीखा

अर्पणा हिमाचल के कार्यक्रमों में समर्थन देने के लिए हम बैजनाथ भंडारी पब्लिक चैरिटेबल ट्रस्ट (नई दिल्ली) और श्रीमती सुषमा अग्रवाल, (नई दिल्ली) के अत्यन्त आभारी है!

We urgently need your assistance to continue these programs
in Haryana, Himachal Pradesh, and New Delhi
Contact Persons: Mr. Harishwar Dayal, Executive Director, Mobile: 91-9818600644
Mrs. Aruna Dayal, Director Development, Mobile : 91-9991687310
Donation to Arpana provide_50% tax relief under section 80G of the Income Tax act 1961
Send Donations to: Arpana Information & Resources, Madhuban, Karnal, Haryana 132037
Emails: arct@arpana.org and at@arpana.org, Websites: www.arpana.org and www.arpanaservices.org
Instagram@arpanaorg, You Tube:Arpana Charities, Facebook Arpana Charities &Arpana Trust

ARPANA TRUST
EDUCATION FOR DISADVANTAGED CHILDREN
- Tuition support for classes 1-12, pre-school classes for toddlers, cultural activities
- Vocational Training classes

HUMANE VALUES
FOR AN EQUITABLE SOCIETY
- Dramas, Publications, Satsangs
- Charitable grants for the vulnerable
- Health/socio economic assistance.

DONATE ONLINE

ARPANA RESEARCH AND CHARITIES TRUST
PROVIDES MODERN HEALTH CARE THROUGH:
- Arpana Hospital for free/affordable health care.
- Arpana Medical Center, Himachal.

EMPOWERING WOMEN
- Self Help Groups & SHG Federations.
- Micro-Credit, Income generation, Community development

EMPOWERING THE DIFFERENTLY ABLED
- Differently Abled Persons organizations for health, assistive devices, certifications and income generation.

DONATE ONLINE

Please send donations to: Arpana (Information & Resources Office), Madhuban, Karnal, 132037

Arpana Ashram
Research

Publications

श्रीमद्भगवद्गीता	
भगवद् बाँसुरी में जीवन धुन	Rs.300
कठोपनिषद् (हिन्दी)	Rs.120
श्वेताश्वतरोपनिषद्	Rs.400
केनोपनिषद्	Rs.36
माण्डूक्योपनिषद्	Rs.25
ईशावास्योपनिषद्	Rs.20
प्रश्नोपनिषद्	Rs.50
गंगा श्रद्धा प्राणप्रद	Rs.40
प्रज्ञा प्रतिभा	Rs.30
ज्ञान विज्ञा विवेक	Rs.60
मृत्यु से अमृत की ओर	Rs.36
जपु जी साहिब	Rs.70
अर्पणा भजनावली	Rs.80
वैदिक विवाह	Rs.24
गायत्री महामन्त्र	Rs.20
नाम	Rs.15
अमृत कण	Rs.12
Lets Play the Game of Love	Rs. 400
Bhagavad Gita	Rs.450
Kathopanishad	Rs.120
Ish Upanishad	Rs.70
Prayer	Rs.25
Love	Rs.20
Words of the Spirit	Rs.12
Notes	Rs.10

Bhajan CDs

ईशावास्योपनिषद् (a deluxe 8 CD set)	Rs.2000
स्वरांजलि - भाग 1 और 2	Rs.175each
नमो नमो	Rs.175
उर्वशी भजन	Rs.175
हे राम तुझे मैं कहती हूँ	Rs.75
गंगा (भाग 1 और 2)	Rs.75each
राम आवाहन	Rs.75
तुमसे प्रीत लगी हे श्याम	Rs.75
हे श्याम तूने बंसी बजा	Rs.75

For ordering of books, please address M.O./DD to: **Arpana Publications** (payable at Karnal). Kindly add Rs. 25 to books priced below Rs. 100 & Rs. 40 to books above Rs. 100 as postal charges

Arpana Pushpanjali

Hindi/English Quarterly Magazine

Subscription	**Annual**	**3yrs**	**5yrs**
India	130	375	600
Abroad	350	1000	1650

Advertisement	**Single**	**Four**
Special Insertion (Art Paper)	10,000	
Colour Page	3500	12,000
Full Page (b&w)	2000	6000
Half Page (b&w)	1200	4000

(Amounts are in Rupees)

Subscription drafts to be addressed to: **Arpana Trust (Pushpanjali & Publications)**

Delhi Contact Person:
Mrs. Neeta Tandon
E-22 Defence Colony,
New Delhi 110024
Tel: 98712-84847

Donation cheques to be addressed to: Arpana Trust

Arpana Trust *- Donations for Spiritual Guidance Activities, Publications, Scholarships and Delhi Slum Project. Regd. under FCRA (Regd, number 172310001) to receive overseas donations.*

Applied Research

Medical Services

In Haryana
- 130 bedded rural Hospital
- Maternity & Child Care
- Family Planning
- Eye Screening Camps
- Specialist Clinics
- Continuing Medical Education

In Himachal
- Medical & Diagnostic Centre
- Integrated Medical & Socio-Economic Centre

In Delhi Slums
- Health care to 50,000
- Immunisations
- Antenatal Care
- Ambulance

Women's Empowerment

Capacity Building
- Entrepreneurial activities
- Local Governance
- Micro-Planning
- Legal literacy

Self Help Groups
- Savings
- Micro credit
- Federation
- Community Health
- Exposure Visits

Gender Sensitization

Income Generation through Handicraft Training Skills

Child Enhancement

Education
- Children's Education
- Vocational Education
- Cultural Opportunities
- Day Care Centres
- Pre-school Care & Education

Health
- Nutrition Programme
- School Health Programme

In Delhi Slums
- Environment, Building Parks & Planting trees
- Housing Project
- Waste Managem

Arpana Research and Charities Trust *Exempt U/S 80 G (50% deduction) on donations for the hospital & Rural Health Programmes. Regd. under FCRA (Regd. number 172310002) to receive overseas donations.*

Contact for Questions, Suggestions and Donations:
Mr. Harishwar Dayal, Executive Director, Arpana Group of Trusts, Madhuban, Karnal - 132037, Haryana.
Tel: (0184) 2380801- 802, 2380980 Fax: 2380810 Email: at@arpana.org / Web site: www.arpana.org
All donation cheques/ DD to be addressed to : ARPANA TRUST